International Indexed & Referred Research Journal, ISSN- 2250-2556; VoL. I *ISSUE-1, April, 2012.

शोध पत्र- हिन्दी

शिवानी की कहानियों में विकलांग विमर्श

* प्रा. रेविता बलभीम कावळे

प्रस्तावना-

इक्कीसवीं सदी में साहित्य के क्षेत्र में स्त्री-विमर्श, दलित विमर्श, मुस्लिम विमर्श, आदिवासी और जनजाती-विमर्श, पर काफी मात्रा में समीक्षा और अलोचना का कार्य उत्कर्ष रूप से साहित्यिक प्रेमियों के हृदय को स्पर्श करता हुआ आगे-ही-आगे बढ़ता जा रहा है। साहित्य में आदिकाल से लेकर इक्कीसवीं सदी तक कहीं-न-कहीं कुछ साहित्यिकों के साहित्य में विकलांग विमर्श भी देखने को मिलता है। परंतु इस विमर्श की ओर किसी का लक्ष्य केंद्रित नही हो रहा है। इसलिए मन में विचार आया कि विकलांग की वेदना विकलांग ही जान सकता है, इसलिए यह एक नया विषय सामने रखते हुए मैंने अध्ययन किया तो अनेक स्थानों पर मुझे विकलांग विमर्श के दर्शन हो गए। जिसकी ओर मैं अनदेखा नहीं कर सकी। इसलिए इस दिशासे अध्ययन जारी रखकर साहित्य के क्षेत्र में विकलांग विमर्श पर भी अनुसंधान होना जरूरी है। वैसे देखा जाए तो हिंदी साहित्य के कई जानेमाने साहित्यकारों के साहित्य में विकलांग विमर्श पढ़ने को मिला है।

उनमें से ही एक हिंदी साहित्य जगत को अजरामर रखनेवाली ख्यातीप्राप्त लेखिका शिवानी की कहानियों में अनेक स्थानों पर अनेक कहानियों में विकलांगता का चित्रण आया है। इस लेखिकाने विकलांगो के प्रति आस्था व्यक्त की है। विकलांगों को केन्द्र में रखकर साहित्य सृजन किया है। हिन्दी जगत की ख्यातनाम लेखिका शिवानी जी का प्रसिध्द तथा बहुचर्चित कहानी संग्रह 'मेरी प्रिय कहानियाँ' नाम से प्रकाशित हुआ। इस कहानी संग्रह का दूसरा संस्करण भी १९७४ में प्रकाशित हुआ। इस कहानी संग्रह के अंतर्गत कुछ ऐसी कहानियाँ है जिनमें विकलांग पात्रों का चित्रण अत्यंत सुंदरतापुर्वक दृष्टिगोचर होता है। उपरोक्त कहानी संग्रह की प्रथम कहानी 'करिए छिमा' में एक विदेशी विकलांग चित्रकार का चित्रण अत्यंत सुंदरता से अभिव्यक्त हुआ है। यह विदेशी चित्रकार कुछ दिनपूर्व एक गाँव की गुहा में आकर रहता है। वह गुहा चारों तरफ से मीठे सेब, नासपाती, अखरोट और मिहिल के वृक्षों से अच्छादित है। ऐसी लम्बी रेल-टनेल सी बनी अन्धकारपूर्ण प्राकृतिक गुहा में आकर वह परदेशी चित्रकार रहता है। परंतु वहाँ के ग्राम वासियों का कहना है कि, वह गुहा उसी विदेशी की प्रेतयोनी का स्थायी आवास बन गई थी। अपने बीभत्स महारोग को, अपनी ग्रीक देवता-सी सुन्दर देह में छिपाए वह विदेशी जब उस गुहा में रहने आया था तो उसके रोग का कोई भी बाह्य चिन्ह देखने में नहीं आये थे। ग्रामवासी उसे 'पादडी साहब' कहकर पुकारते थे । परंतु धीरे-धीरे किसी खंदक में छिपे कुटिल शत्रु की भाँति, उसके रोग ने उसपर अचानक आक्रमण किया और वह उस बिमारी से निहत्था नहीं जूझ सका पहले हाथ की अंगुलिया नष्ट हो जाती है, फिर पलके नष्ट हो जाती है। इतना ही नहीं तो एक वर्ष के अंदर वह बुरी तरह से लंगडाने लगता है। कुछ दिनों तक वह अपने ठुंठ से हाथों से गुहा-भित्ति को अपनी अनूठी कला से विभूषित करता है। परंतु एक दिन विवश तुलिका नीचे गिर पड़ती है। फिर भी वह चित्रकार सहजता से पराजय स्वीकार करने को तत्पर नहीं होता। जो कल्पनात्मक हाथ तूलिका को धन्य करते है। वह कुदाली थाम लेता है। जलना, रामगढ़, कुल्लू आदि स्थानों से सुनहरे सेब नासपातियों की पौध मंगाकर वह चित्रकार अपने विकृत हाथों से फल और पुष्पों के भावी नन्दनवन की सृष्टि करता है। यह ठिक था कि वह स्वयं फल खाने तक जीवित नहीं रह सकता। परंतु मीठे कुएं का पानी पीकर लोग कुआ खोदनेवाले को स्मरण तो करेंगे ही इस में कुछ दोमत नहीं है।

कुछ दिनों के बाद उसका रोग छाती पर चढ़ बैठता है। वह एक दिन अपनी मानसिक व्यथा और शारीरिक व्यथा से अधिक असह्य हो जाता है। एक ग्वाले के पुत्र को उसने कभी पढ़ाया था। वही लड़का पाव-भर दुध नित्य उस चित्रकार के आले में धरे मग में उंडेलकर जाता है। परंतु एक दिन जब दुध उंडेलने को आया तो वहाँ मग न देखकर उसने खिड़की से झाँककर देखा तो अनायास जोर से चीख कर भाग जाता है। उसे वहाँ गुहा-भित्ति की किसी अदृश्य खूंटी से टंगी, उस चित्रकार की निर्जीव सी देह झूल रही नजर आती है। कोई भी उसकी ओर जाने का साहस नहीं करता। अल्मोड़ा के ही दो-तीन मिशनरी आकर, उसी के बाग में उसे दफनाकर चले जाते है। तब से प्रति वर्ष नासपाती और सेब के वैभव से गदराए बाग का व्यर्थ यौवन अनाघ्रात पुष्प की भांति झर-झरकर मुरझा जाता है। लोगों का कहना था कि, "गुहा की छत से झूलता हुआ चित्रकार संध्या होते ही कूद जाता है और बड़ी चौकसी से अपने बाग की रखवाली करता है" [१] पर तीसरे ही दिन उस बाग से सुनहरे सेब बेचने बाजार जाती हुई एक दुस्साहसिनी नारी को देखा जाता है। यह नारी का दुस्साहस देखकर पूरा गांव दंग रह जाता है। कुछ ही घंटो में वह स्त्री अपनी गृहस्थी बसाने के सामान से भरी पोटलिया लेकर मुस्कुराती हुई लौटती है तो उस गांव की स्त्रियों में काना-फुसी होती है, "देखा, कितने बडे बम-गोले से सेब है। कोढ़ी साहब की हड्डियों की खाद डली है, इसी से।"[२]

इस प्रकार एक विकलांग व्यक्ति होते हुए भी कितना निस्वार्थ भाव से कार्य करता रहता है। जब की उसे मालूम है कि इस बाग का फायदा उसे नहीं होनेवाला फिर भी वह उस बाग का नंदनवन बनाने के लिए काफी कड़ी मेहनत करता है। जिसका लाभ

कोई तीसरा ही उठाता है। इस कहानी में एक विकलांग नारी इरावती का भी संक्षेप में चित्रण आया है। वह हर दिन विदेशी चित्रकार के बाग के सेब, अखरोट, नासपाती, आदि चुराकर बाजार में बेचकर अपना जीवन यापन करती है। एक रात को वह अनायस ही श्रीधर से टकराकर गिर पड़ती है। गिरते ही वह ऐसे सिसकियाँ देती है मानो सिसकी के साथ ही उसके प्राण भी निकल जाएंगे। तब वह श्रीधर से झुठ बोलती है, "घास काटकर आ रही थी। मोच आ गई। बस किसी तरह खींच-खांच कर मेरी गुफा में पटक थे, लाल साहब! तुम्हारे गुण नहीं भूलूंगी।"[३] श्रीधर उसको अच्छी तरह पहचानता था। कहीं बहाना बनाकर वह छाया- गृहिणी उसे अपने गुहाँ मे अपनी लोकप्रिय क्षुधा का ग्रास बनाने को तो नहीं खींच रही थी। ऐसा श्रीधर सोचता ही है कि, वह कहती है," देर मत करों लाल साहब ! हत्यारा आता ही होगा... देखतें नहीं बदबु आने लगी है।[४] इस बात से वह चौक उठता है। भीगी घास पर पडीं असाहाय हीरावती को अपनीं बलिष्ठ भुजांओ में उठाकर उसकी गुफाँ तक पहुँछाता है। हीरावती को नीचे उतारकर वह, पसीना पोंछ रहा था। कि, पंगु बनी हीरावती छलांग लगाकर भागती है और लंगडाती हुई चट्टान का सहारा लेकर खडी हो जाती है।

इस कहानी संग्रह की दूसरी कहानी "पुष्पहार" मे भी विकलांग पात्रों का चित्रण आया है। 'दुर्गी' नामक महिला के विकलांग पति का चित्रण है। वह एक फौजी सुबेदार था। वह दहेजु था। सुबेदार दहेजु था, पर तीन-तीन भैंसे थी। कही भेड बकरिया थी और पनचक्की भी थी। पाकिस्तान की लडाई से तो वह सकुशल लौट आता है लेकिन घर में चुभी एक नन्ही कील के कारण बांया पैर कटवाना पडता है। तब से वह लंगडकर चलता है। वह दिन-रात शराब के नशें मे चुर रहता है। उसकी पत्नी दुर्गी ही घर और बाहर का काम संभालती थी। वह देखते हि देखते ग्राम हवाई दीप सा प्रसिद्ध हो जाता है। जहां का शुद्ध घृत अपनी पावन सुगंध की सुख्याति दूर-दूर तक फैलाता था पर अब 'चुर' की मिलावट से अपने सुनाम पर कालिक पोतने लगता है। सीमा के प्रहरी शराब की धुडक लगने पर धेले-टके में ट्रांजिस्टर बेचने लगते है। वही धीर-धीरे ग्राम के लोंगो ने भी स्वाद लेना सीख लिया था। दुर्गी का विकलांग पति भी दिन-रात नशे में डुबा रहता है। एक दिन दुर्गी बकरी कों घास चराने जाती है तो उसके पति की आँखो में विवशता के आंसू छलक आते है। वह सारी रोटी उठाकर खिडकी से बाहर फेंक देता है। "दिन-भर साली हरामजादी बकरियों के साथ खुद कैसी- कैसी हरी घास चरती है।"[५] वह चेहरा देखते ही समझ जाता है। एक दिन तो वो बैसाखी के सहारे पेड़ के मोटे तने में जाकर छीप-छीपकर उसकी जल क्रिडा देखता है। दूसरे दिन पुरा ग्राम पंचो सहित उसके साथ जाता है। क्रोध से उत्तेजित वह अपाहिज किनारे से ही गालियों के पत्थर बरसाने लगता है। इस प्रकार वह विकलांग होते हुए भी अपनी पत्नी पर पुरी तरह से नजर लगाये बैठता है। अत: विधाता जब किसी मनुष्य से उसका कोई अंग छीनता है तो स्वयं ही उस क्षतिग्रस्त अंग कि क्षमता किसी रूप में उस व्यक्ती को लौटा भी देता है। इस कहानी संग्रह की कहानी "चिलगाडी" में भी कुछ विकलांगो का चित्रण आया है। आत्मकथात्मक शैली में लिखी गई यह कहानी अत्यंत प्रसिद्ध है, कहानी निवेदक ' मैं ' विवाह के बाद ससूराल जाती है तो अपनी दोनों जिठानियों और ननंदो को देखकर भय भीत हो जाती है। "क्या चेहरा था बड़ी जिठानी का, बालों से भरा संकुचित ललाट अंदर को धसी हुई क्रुर आंखे बाहर को निकले विकराल गजदन्त और एकदम मुंडा सिर।"[६] दूसरी जिठानी भी उन्ही की टक्कर की थी । हरिद्वार से वे दोनों सिर मुंडाकर लौटती है। वैधव्य से दोनों का चेहरा और भी भयानक लगता है। बडी जिठानी के कोई भी संतान नहीं। दूसरी के एक राक्षसाकृती अपंग पुत्र है। उसे वह चौबिस घंटे गोदी में टांगे रहती, पंद्रह वर्ष के उस विचित्र जीव की आंखे किसी भुखे वन्य पशु की सी लगती । कभी कभी वह आँख की पुतलियों को लट्टू सा घुमाता, ' मैं ' की ओर देखकर ही- ही कर हंस देता और अपने हंडे सा भीम मस्तक हिलाने लगता । तब 'मैं' भय से काँप उठती।

इस कहानी संग्रह की 'शपथ' कहानी में एक अंध वृद्ध व्यक्ती का पात्र आया है। वह एक अंध व्यक्ती विधुर है। उसकी बेटी का ससूराल उसके घर से दो गज की दुरी पर है। परंतु दस वर्ष के पुत्र की माँ बनने के बाद भी एकरात के लिए भी अपने अंधे बाप के पास नहीं रह सकती।

निष्कर्ष:-

इस प्रकार विकलांग पात्रों की असहाय वेदना का चित्रण लेखिका ने अत्यंत सहानुभुती से किया है। कुछ विकलांग पात्रों ने विकलांग होते हुए भी अपनी कामयाबी मे सफलता प्राप्त कि है। तो कुछ विकलांग होते हुए भी नशें मे चुर हो जातें है। इस प्रकार हमारे भारतीय समाज मे विकलांगता एक अभिशाप है । इससे जीवन नष्ट हो जाता है। परिवार संतप्त होता है। मगर कुछ ऐसे भी अपंग है जो जीवन में आगे-ही-आगे बढते जाते है। हमारे साहित्य में सुरदास, जायसी, जैसे अनेक कालजयी विकलांग व्यक्ती है जिनकी प्रेरणा से हम अपने पैरो पर खडा हो सकते है। विकलांग व्यक्ती हमारे समाज मे हमेशा उपेक्षा का आधिकारी माना जाता है। विकलांगों को वह जीवन जीना नसीब नहीं होता, जो एक आम मानव जीता है । उपेक्षाओं का सामना करते- करते विकलांग मानव समाज से कट जाता है । समाज भी उसे एक अंग हीन मानकर उपेक्षित रहने देता है। उस व्यक्ती को सामाजिक आधिकार से भी वंचित रखा जाता है। विकलांग की राह रोकने वाली मुश्किलें शारीरिक और मानसिक भी होती है। परंतु इन मुश्किलों को दृढ विश्वास, संकल्प शक्ति और कुछ कर गुजरने की तमन्ना से पार किया जा सकता है। इसलिए डॉ. इकबाल अहमद ने विकलांगो का हौसला बढाने के लिए कहा है -

खुदी को कर बुलंद इतना कि हर तकदीर से पहले,
खुदा बन्दे से पुछें, बता तेरी रजा क्या है?

संदर्भ ग्रंथ * *ह. बहिर्जी स्मारक महाविद्यालय, वसमत, हिंगोली*

१) शिवानी - मेरी प्रिय कहानियाँ, पृष्ठ नं.२२,२३,२६,४८,७२, दुसरा संस्करण सन-१९७४, राजपाल ॲण्ड सन्स, कश्मिरी गेट दिल्ली। २) डॉ. पाठक विनयकुमार- निशक्त चेतना-भाग ३, १ नवंबर २०१०, भारतीय विकलांग चेतना परिषद, बिलासपुर (छत्तीसगढ़)